Quest Journals
Journal of Research in Humanities and Social Science
Volume 6 ~ Issue 6 (2018) pp: 25-29
ISSN(Online):2321-9467
www.questjournals.org

Research Paper

पर्यावरण संरक्षण : शुंग–कुषाणकालीन बौद्ध कला में पर्यावरण संरक्षण

Dr. Ambika Bajpai
Associate Professor, Navyug Kanya Mahavidyalaya, Lucknow
Email:ambika.bajpai1977@gmail.com

सार

पर्यावरण संरक्षण आज का ज्वलंत विषय है। इसका कारण यह है कि वर्तमान में पर्यावरण में असंतुलन हो गया है। इसके लिये कई कारक उत्तरदायी है। अतः आवश्यकता है कि पर्यावरण को संरक्षित किया जाय। प्राचीन काल में मानव ने जिन कलाकृतियों का निर्माण किया उन्हें अलंकृत करने के लिये विविध पशुपक्षियों, पेड़, पौधों का अंकन उस में किया गया । इसका महत्व पर्यावरणीय दृष्टि से भी था। प्रस्तुत पत्र में यह अध्ययन करने का प्रयास किया गया है कि शुंग–कुषाणकालीन बौद्ध मूर्तिकला में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा किस प्रकार सन्निहित है।

Key words *- पर्यावरण, शालभंजिका, जातक ग्रंथ, बोधिसत्व, स्तूप, महाभिनिष्क्रमण, चैत्य*

मानव की उत्पत्ति, विकास और अस्तित्व के लिए जो प्राकृतिक तत्व आवश्यक होते है उन्हें पर्यावरण के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है। जैसे–वायु, जल, भूमि आदि। पर्यावरण का तात्पर्य है हमारे चारों ओर फैला हुआ आवरण। मानव, वनस्पति पशु, पक्षी सहित सभी जैविक और अजैविक घटकों के समूह को पर्यावरण कहते है। प्राचीन समय से ही मानव का पर्यावरण से घनिष्ठ सम्बन्ध है, दोनों अन्योन्याश्रित है। पर्यावरण मानव से और मानव पर्यावरण से प्रभावित होता है। पेड़–पौधे व पशु–पक्षी मानव के सर्वाधिक निकट है। प्राकृतिक तत्वों व मानव के बीच का सन्तुलन प्रकृति में सन्तुलन बनाता है जिससे पर्यावरणीय परिदृश्य सामान्य बना रहता है अन्यथा यह असन्तुलन अनेक समस्यायें उत्पन्न कर देता है। पर्यावरण संरक्षण को परिस्थितिकी प्रणालियों और उनके घटक भागों में अवांछित परिवर्तनों की रोकथाम के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। पर्यावरण संरक्षण का उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों और प्राकृतिक वातावरण का संरक्षण करना है।

प्राचीन काल में मानव ने जिन कलाकृतियों का निर्माण किया उन्हें अलंकृत करने के लिए विविध पशुपक्षियों, पेड़ पौधों को उकेरा गया। इसके पीछे भावना केवल अलंकरण की ही नही थी बल्कि इनका पर्यावरणीय दृष्टि से भी महत्व था। मौर्य शासन काल में अनेक पाषाण स्तम्भों पर पशु पक्षियों जैसे सिंह, अश्व, गज, मयूर आदि के उत्कीर्णन के साथ वनस्पतियों के रूप में पद्म पुष्प, कलियों व पत्तियों का अंकन देखने को मिलता है जो प्रकृति के महत्व की ओर संकेत है।[1] कांलान्तर में स्वतंत्र भारत में इनके महत्व को स्वीकार करते हुए ही पद्म पुष्प को राष्ट्रीय पुष्प, मयूर को राष्ट्रीय पक्षी घोषित किया गया और राष्ट्रीय चिन्ह में सिंह को स्थान दिया गया।

विचारों का आदान–प्रदान मनुष्य की आदिम प्रवृत्ति रही है। मनुष्य ने अपने मन में उठने वाले विचारों को कला के माध्यम से मूर्त रूप प्रदान किया। कला विचार अभिव्यक्ति का माध्यम है। प्राचीन भारत में मौर्यकाल के पश्चात द्वितीय शताब्दी ई0पू0 से द्वितीय शताब्दी ईस्वी तक शुंग–नरेश ब्राह्मण धर्म के पोषक थे जब कि कुषाण विदेशी थे। बाद में इन्होंने बौद्ध धर्म को अपनाया। इन दोनों ही वंशों के नरेशों द्वारा बौद्ध धर्म को संरक्षण दिया गया। अतः इस काल में स्तूपों, चैत्यों, विहारों के रूप में बौद्ध कला विकसित हुई। इन वास्तुकृतियों में स्तूप सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। स्तूप मिट्टी का थूहा होता था जो चिता के स्थान पर बनाया जाता था, अतः इससे चैत्य भी कहते थे। यह प्रथा बुद्ध से भी पहले की है। चिता के स्थान पर स्मृति रूप में पीपल का वृक्ष रोपा जाता था या मिट्टी का थूहा बनाया जाता था।[2] इस अंकन में वनस्पति व पशु जगत का चित्रण विशद रूप में हुआ है। कला के ये उदाहरण हमें भरहुत, साँची, बोधगया व मथुरा में प्रमुखतः देखने को मिलते हैं।

वर्तमान समय में विश्व स्तर पर पर्यावरण संरक्षण एक ज्वलंत विषय है। आज समूचा विश्व पर्यावरण प्रदूषण की समस्या से ग्रस्त है और इससे निपटने के लिए हर संभव कोशिश कर रहा है। इस समस्या के मूल में कारण अतिविकसित तकनीकी प्रौद्योगिकी हैं। यह तकनीकी एक ओर हमें विकास की ओर ले जा रही है। प्रस्तुत शोध पत्र में

मैंने यह अध्ययन करने का प्रयास किया है कि शुंग–कुषाणकालीन बौद्ध मूर्तिकला के दृश्यों में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा किस प्रकार सन्निहित है।

भारतीय साहित्य में वृक्षों की महत्ता स्थापित की गयी है और उन्हें मनोवांछित फल प्रदान करने वाला कहा गया है। ऋग्वेद में सहस्रशाखाओं वाले वनस्पति को अपनी मधुमयी धारा से सींच देने के लिये सोम से प्रार्थना की गयी है।[3] पीपल को अश्वत्थ भी कहा जाता है। बौद्ध धर्म के साथ हिंदू धर्म में भी पीपल के पेड़ का बहुत महत्व है। धार्मिक दृष्टि के अतिरिक्त इस वृक्ष का वनस्पति विज्ञान और आयुर्वेद में भी बहुत ही महत्व है। वासुदेव, चैतन्य और विश्व वृक्ष पीपल के पेड़ के कुछ अन्य नाम है। पीपल वृक्ष की जड़ में ब्रह्मा, तने में विष्णु व पत्तों में शिव का वास माना जाता है। भरहुत सांची, बोधगया आदि से प्राप्त स्तूपों की वेदिकाओं व तोरणों पर विविध प्रकार के बोधिवृक्षों का अंकन हुआ है और इनका सम्बन्ध मानुषी बुद्धों से जोड़ा गया है जैसे–

1. अश्वत्थ या पीपल गौतम बुद्ध का,
2. वटवृक्ष काश्यप बुद्ध का,
3. उदुम्बर कनकमुनि बुद्ध का,
4. पाटलि विपस्पिन् बुद्ध का,
5. शालवृक्ष विश्वभू बुद्ध का,
6. शिरीष क्रकुच्छन्द बुद्ध का बोधिवृक्ष था।[4]

इन वृक्षों पर बुद्ध के नाम भी अंकित है। सम्बोधि से पूर्व सुजाता द्वारा गौतम को वृक्ष देव समझकर उन्हें खीर खिलाने का दृष्टांत साँची स्तूप तोरण द्वार पर उत्कीर्ण मिलता है।[5] साँची के विशाल स्तूप के उत्तरी तोरण के बीच की बडेरी के अग्रभाग पर तथा पूर्वी तोरणे की ऊपरी बड़ेरी के पृष्ठभाग पर उपर्युक्त सातों बुद्धों का अंकन उनके बोधिवृक्षों के माध्यम से किया गया है। क्योंकि हीनयान विचारधारा के अनुसार बोधिसत्व को मानव रूप में अंकित करना और पूजना वर्जित था। यह दृष्टांकन वृक्षों के महत्व की आरे संकेत करता है।

बौद्धकला में बोधिवृक्ष के अनेक अंकन भरहुत, साँची, बोधगया, मथुरा, अमरावती, तथा नागार्जुन कोण्डा के उत्कीर्ण शिल्प में देखे जा सकते है। जहाँ उन्हें प्रायः चौकोर वेदिकाओं से घेर दिया गया, मालाओं और छत्रों से सजाया गया है, नर–नारियों के द्वारा हाथ जोड़ कर उनकी पूजा की जा रही है और मालाधारी सपक्ष विद्याधर अथवा किन्नर उनके दोनों पार्श्वो में आकाश में मंडरा रहें है। साँची और अमरावती शिल्प के इन दृश्यों को देखकर फर्ग्यूसन ने इसे वृक्ष पूजा का अंकन माना है।[6]

सघन वृक्षों से युक्त वनों के महत्व को हर युग के मानव द्वारा समझा गया। इसलिये समय–समय पर उन वृक्षों को शासको द्वारा बौद्ध संघो को दान में दिया गया जैसे–हर्यंक नरेश बिम्बिसार द्वारा वेलुवन दान में दिया गया था। श्रावस्ती के श्रेष्ठि अनाधपिंडक द्वारा जेत नाम राजकुमार से उसका एक वन क्रय कर के उसे बुद्ध को दान में दिया गया। जेत ने अनाथपिंडक से उस वन का इतना मूल्य मांगा, जितना धन, वन की भूमि पर फैलाया जा सके। इस घटना का अंकन भरहुत की वेदिका पर विस्तार से किया गया है। इस दृश्य में बैलगाड़ी से कार्षापण जमीन पर बिछाये दिख रहे है। मध्यभाग में अनाथपिंडक को जलपात्र लेकर उद्यान का दान करते हुये प्रदर्शित किया गया है। इस दृश्य की पहचान हेतु **'जेतवन अनाथपिंडको देतिकोटि संहतेन केतो'** लेख उत्कीर्ण है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि एक करोड़ की मुद्राये बिछाकर खरीदे गये जेतवन का दान अनाथपिंडक कर रहा है।[7]

शुंग–कुषाणकालीन वास्तुकृतियों के अलंकरण के लिये वेदिकाओं व तोरणद्वारो पर वृक्षों के निकट या नीचे खड़ी नारी आकृतियाँ बड़ी संख्या में निर्मित की गयी। इन्हें 'शालभंजिकाएँ' कहा गया। ये आम्र, शाल या अशोक वृक्षों के समीप इस प्रकार निर्मित की गयी जैसे वे इन वृक्षों का आलिंगन कर रही हो। साँची, भरहुत, बोधगया, मथुरा, अमरावती के शिल्प में इन शालभंजिकाओं को देखा जा सकता है। (**चित्र**) कुछ स्थानों पर तो ये वृक्षों का आंलिगन करती दिखायी गयी है जब कि कुछ स्थानों पर वे वृक्ष की केवल डाल ही पकड़े अंकित की गयी है। कलाकार ने इन नारी आकृतियों की वृक्षों से निकटता सिद्ध करने का प्रयास किया है। वासुदेव शरण अग्रवाल ने बुद्ध के समय शालभंजिका नाम का उत्सव मनाने के अनेक दृष्टान्त प्रस्तुत किये है।[8] पाणिनी के अनुसार इस प्रकार का उत्सव प्राच्य भारत में प्रचलित था। वोगेल के विचार से शालभंजिका उत्सव मगध और उसके निकटवर्ती भू–भाग में विशेष रूप से मनाया जाता था।[9] बौद्ध ग्रन्थों में इस उत्सव का अनेक स्थानों पर उल्लेख किया गया है। जातक निदान कथा के वर्णन के अनुसार जिस समय लुम्बिनी वन में शालवृक्ष फूलों से लद गये थे उस समय बुद्ध की माता माया देवी वन में केलि करने की इच्छा से परिचारिकाओं के साथ गयीं थीं।[10]

*Corresponding Author: Dr. Ambika Bajpai

शालभंजिकाओं का यह अंकन पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण माना जा सकता है। शालभजिकाओं की आकृतियाँ प्रायः स्तूपों के तोरणों की कड़ियो अथवा उनके चारों ओर की वेदिका के स्तंभों पर उत्कीर्ण पाई गयी है। इसलिये इन्हें तोरण–शालभंजिका और स्तम्भ–शालभंजिका कहा जाता है। तोरण–शालभंजिका का उल्लेख अश्वघोष कृत बुद्ध चरित्र में मिलता है।[11] इनके उदाहरण साँची[12], एरण[13] मथुरा, जनखत[14] से मिलते है। स्तम्भ–शालभंजिकाये भरहुत[15], साँची[16] , महरौली, मथुरा आदि स्थानों से प्राप्त हुई है। उनकी स्थिति कैसी भी हो यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि इन शालभंजिकाओं के अंकन में कलाकार ने इन नारी आकृतियों की वृक्षों से निकटता सिद्ध करने का प्रयास किया है। शालभंजिकाओं का यह अंकन पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण माना जा सकता है। मानव जीवन में वृक्षों का महत्व बहुत अधिक है। जीव श्वास से जीवन पाता है। अधिक वृक्ष पर्यावरण की सुरक्षा के लिए आवश्यक होते है। वृक्षों को काटने से, पर्यावरण प्रदूषण को रोकने वाला कारक समाप्त हो सकता है, जो जीवों के लिए प्राणघातक स्थितियाँ उत्पन्न कर सकता है। शुंग–कुषाणकालीन इन शालभंजिकाओं की स्थिति वर्ष 1973 में गढ़वाल के चमोली जिले के गोपेश्वर नामक स्थान पर वृक्षों की कटाई का रोकने के लिए चलाये गये "चिपकों आंदोलन" व दक्षिण भारत के एप्पिकों आन्दोलन में भाग लेने वाली स्त्रियों जैसी है।

शुंग–कुषाणकालीन बौद्ध कलाकेन्द्रों की कलाकृतियों में पद्म पुष्प को भी देखा जा सकता है। पद्म पृथ्वी का प्रतीक है जो सर्वव्यापकता का बोध कराता है। पदम् और सूर्य का घनिष्ठ संबंध है क्योंकि पदम सूर्योदय के साथ ही पुष्पित होता है और ब्रह्मरूपी ज्ञान के सूर्य से मनरूपी कमल विकसित होता है। सहस्रदल कमल हिरण्यगर्भ का प्रतीक है जो ब्रह्मतत्व का उद्भव स्थल है। पद्म का जन्म पंक में होता है तथापि पंक उस को दूषित नही कर पाता है। जो प्राणी संसार रूपी पंक में उत्पन्न होकर भी, संसार के मायारूपी जल से निर्लिप्त रहता है और सांसारिकता के मोह से मुक्त रहता है वही सच्चा मानव है। यही आदर्श मानवजीवन है। पद्म का यह उपदेशात्मक रूप ही जीवन का सत्य और शिव है।[17] पौराणिक विवरण के अनुसार विष्णु की नाभि से निःसृत पद्म से ब्रम्ह्मा जन्म धारण करते है, इसलिए इन्हें "पद्मयोनि" या "पद्मसम्भव" कहा गया है।[18] महायान विचारधारा में भी आदि काल में सर्वप्रथम शतदल पदम् के विकसित होने तथा उसी से आदिबुद्ध के अवर्तीण होने की परिकल्पना की गई है।[19] ललितविस्तर में पदम एक अष्टमंगल कहा गया है। पद्म को बुद्ध के जन्म का प्रतीक माना गया है इसके महत्व को स्वीकार करते हुए आधुनिक भारत में कमल को राष्ट्रीय गौरव प्रदान किया गया है।[20]

साँची शिल्प में अनेक संभ्रान्त नर–नारियों के हाथ में पद्म दिखाई देता है। चक्र फलकों अथवा अर्द्धचक्र फलको में भी पदम् के अनेक रूप देखें गये है। भरहुत स्तूप के वेदिका स्तंभों के चक्र फलकों में भी भाँति–भाँति के पदम् उत्कीर्ण किये गये है जिनके केन्द्र में स्त्री अथवा पुरूष की सुन्दर मुखाकृति उकेर दी गयी है।

सॉची के स्तूप संख्या–2 के वेदिका स्तंभ भी अपने चक्रफलकों और अर्द्धचक्र फलकों में पद्म के विविध रूपांकन प्रस्तुत करते है। सॉची, भरहुत मथुरा आदि के बौद्ध शिल्प में कल्पलताओं के अनेक अंकन मिले है, उनके भी पद्म के विविध रूप दर्शाये गये है।[21]

शुंग–कुषाणकालीन बौद्ध कलाकृतियों में कुछ पशुओं को भी देखा जा सकता है। भरहुत, बोधगया, मथुरा, साँची के वेदिका स्तम्भों व तोरण द्वारों पर गज का अंकन मिलता है, जिसे बुद्ध के जन्म का प्रतीक माना गया। भरहुत स्तूप की वेदिका के अंकन में माया देवी सोयी हुई प्रदर्शित है और एक गज की आकृति शैया के ऊपरी भाग में खुदी हुयी है। नीचे सेविकाओं को दिखाया गया है। फलक पर उत्कीर्ण लेख में 'भगवतो उक्रांति' लेख खुदा है।[22]

सभी स्थानों पर बुद्ध के गृह त्याग के दृश्य को अश्व द्वारा प्रदर्शित किया गया है ललितविस्त के अनुसार बुद्ध ने अपने घोड़ें कंथक पर सवार होकर नगर से बाहर जाकर अपने परिचारक छन्दक को घोड़ा वापस ले जाने की आज्ञा दी अतः अश्व "महाभिनिष्क्रमण" का प्रतीक है। बुद्ध की पूर्व जन्म की कथाये जातक कथायें कही गयी है, स्तूपों की वेदिकाओं व तोरण पर जातक कथाओं के दृश्य भी मिलते है जिनमें कुछ पशुओं का अंकन किया गया है। वेसंतर जातक क कथानक के गजदान का दृश्य साँची स्तूप के उत्तरी तोरण द्वार में प्रदर्शित है।

महाकपि जातक की कथानक के दृश्यांकन में कपियों को देखा जा सकता है। साँची स्तूप के पश्चिमी तोरण में बोधिसत्व के बन्दरों के मुखिया के रूप में अंकित किया गया है। इस अंकन में ऊपरी फलक पर बोधिसत्व के शरीर रूपी पुल को पार कर बंदरों को अपनी जान बचा कर जाते हुए दिखाया गया है।[23]

साँची स्तूप के दक्षिणी तोरण छः दातों वाले हाथी का अंकन है जो छदन्त जातक की कथा का विवरण प्रस्तुत करते उत्कीर्ण किये गये है। जातक के चित्रण में गज के सम्मुख एक शिकारी को दिखाया गया है। वेदिकाओं पर नागों का भी अंकन मिलता है। यह अंकन सर्परूप में, नृसर्प विग्रह रूप मे और मानव रूप में हुआ है। इन्हें बोधिवृक्ष की पूजा करते दिखाया गया है। साँची स्तूप के पश्चिमी दिशा के द्वार तोरण पर चक्र के समक्ष अनेक हिरण दिखाये गये है जो मृगदाब का संकेत करते है, जहाँ बुद्ध ने प्रथम उद्देश्य दिया था।[24] अतः हिरण धर्मचक्रप्रवर्तन का प्रतीक माने जा सकते है। उत्तरी दिशा के द्वार तोरणों पर सिंह की आकृतियाँ भी अंकित है।[25]

*Corresponding Author: Dr. Ambika Bajpai

इन पशु–पक्षियों के अतिरिक्त भरहुत, साँची, मथुरा आदि स्थानों की बौद्ध कला में कुछ अन्य जन्तुओं को भी देखा जा सकता है। जैसे–भरहुत स्तूप वेदिका के स्तम्भों पर मोर, तोते और गिलहरियाँ अंकित है। नाग, सिंह, व्याल, गजमच्छ, मगरमच्छ, गेंडा, बकरी, वृष, मृग, बारहसिंघा, भेड़िया, खरगोश, हंस, बटेर, जगली बत्तख, कुक्कुट, आदि भी देखे जा सकते है।[26]

साँची स्तूप के द्वार तोरणों पर भी अनेक पशु–पक्षियों की आकृतियाँ मिलती है जैसे– बकरा, वृष, ऊँट, गजसिंह, सिंहव्याल आदि।[27] बोधगया में भी अनेक पशुओं का चित्रण मिलता है जैसे– सपक्ष सिंह, सपक्ष अश्व, मेढ़े, बकरे, मगरमच्छ, वृष आदि।[28] ये दृश्य पशुओं के महत्व को उजागर करते है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि शुंगकुषाणकालिन बौद्ध कलाकृतियों में प्राकृतिक दृश्यों यथा वनस्पतियों व पशुपक्षियों का अंकन बहुत अधिक हुआ है। इसरों द्वारा किये गये अध्ययन से पता चलता है कि भारत में मरूस्थल का विस्तार तेजी से हो रहा है। और जलवायु परिवर्तन की समस्या भी सामने है। अनेक पशुपक्षियों की प्रजातियों की संख्या से तेजी से घट रही है और कुछ समाप्त होने की सीमा पर है। अतः आवश्यकता है इनकी सुरक्षा की जाय तभी मानव की निरन्तरता बनी रह सकती है और मानव का अस्तित्व सुरक्षित रह सकता है। शुगकुषाणकाल की बौद्ध कलाकृतियो से प्रेरणा लेकर यह संरक्षण किया जा सकता है। तत्कालीन मानव, मनुष्य मात्र के अस्तित्व के लिए इनको जरूरी मानता था जब कि इनमें अन्तर्निहित वैज्ञानिक तत्व से मानव अनभिज्ञ था। आज के वैज्ञानिक युग में पशुपक्षियों व पेड़पौधों का वैज्ञानिक महत्व स्वीकार किया जा चूका है। अधिक से अधिक वृक्षारोपण किया जाय और महत्वपूर्ण वृक्षों जैसे पीपल, अशोक, वट, बेल, ऑवला आदि के रोपण को भी प्रोत्साहन दिया जाये क्योंकि वैज्ञानिकों द्वारा सिद्ध किया गया है कि पीपल का वृक्ष दीर्घजीवी होने के साथ साथ सर्वाधिक मात्रा में आक्सीजन उत्सर्जित करके पर्यावरण को शुद्ध करता है। पशुओं का संरक्षण भी अतिआवश्यक है। जिस प्रकार शालभंजिकायें वृक्षों के संरक्षण की ओर संकेत देती प्रतीत होती है, उसी प्रकार अन्य दृश्यों से भी प्रेरणा लेने का प्रयास करना चाहिए ताकि अपने पर्यावरण की सम्पूर्ण सुरक्षा की जा सकें, मानव मात्र की निरन्तता बनी रहें और आगे आने वाली पीढ़िया सुन्दर, स्वच्छ व स्वस्थ वातावरण में सांस ले सकें।

संदर्भ सूची

1. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ–109–113
2. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ–131
3. ऋग्वेद, 9/5/10
4. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ–150–151
5. दत्त, एन0एन0 तथा बाजपेई, के0डी0, उत्तर प्रदेश में बौद्धधर्म का विकास, लखनऊ, पृष्ठ–46–48
6. Fergusseon, Tree and SerpentWorship, Page–62
7. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ–143, फलक–90
8. Agarwal, V.S. India as Known to Panini, Page-159
9. Vogel, J.Ph., Women & Tree or Shalbhankika in early India literature and Art, Acta Orientalia, Vol. VII, Page-201
10. निदान कथा जातक खण्ड–1 पृष्ठ–52
11. बुद्ध चरित, 5/52
12. Marshal, Majumdar, Foushe, Monuments of Sanchi, Vol-II, Pt-24, 25, 26,27, 43, 44, Srivastava, A.L.,Life in Sanchi sculpture, Pt.-10
13. बाजपेई, के0डी0, भारतीय संस्कृति में मध्यप्रदेश का योगदान, पृष्ठ–127, Bajpai, K.D. Sagar through the ages, Pt.-3A
14. Srivastava, A.L., A bracket Shalbhanjika from Jankhat (Kannauj), Journal of the Indian society of oriental Art, Vol-12-13, Pt.-14
15. Cunningham, The stupa of Bharhut, Pt. 21-23

*Corresponding Author: Dr. Ambika Bajpai

16. Srivastava, A.L., Life in sanchi sculpture, Pt.-26

17. श्रीवास्तव, एल0, भारतीय कलाप्रतीक, पृष्ठ–67

18. रामायण, 7/27/8, 7/4/9, Agarwal, V.S. Indian Arts, Page-53

19. मिश्र, जनार्दन, प्रतीक विद्या, चित्र संख्या–85

20. ललितविस्तर,7,सम्पादक, वैद्य, पी0एल0, पृष्ठ–195

21. श्रीवास्तव, एल0, भारतीय कलाप्रतीक, पृष्ठ–69

22. Cunningham, The stupa of Bharhut, Pt. 16

23. Ahir, D.C. The influences of the Jatak on art and Literature, Page-8

24. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ–174

25. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ–171

26. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ–149

27. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ–165

28. अग्रवाल वासुदेवशरण, भारतीय कला, पृष्ठ–186

चित्रः भरहुत शालभंजिका